आदिवासियों के लिए सतत आजीविका

– रामराव मुंडे, डा. मुनीराजू एस बी

आदिवासियों की रक्षा के लिए भारत के संविधान में विशेष उपाय किए गए हैं और उनका कल्याण सुनिश्चित किया गया है। उनका पालन करते हुए सरकारों ने जनजातियों को अलग–थलग रहने, निरक्षरता, निर्धनता और भुखमरी के चंगुल से निकालने के प्रयासों में कसर नहीं छोड़ी है। संविधान के अंतर्गत अधिनियमित कानूनों के तहत उनके लिए अनिवार्य रूप से न्यूनतम बुनियादी ढांचे और अन्य सुविधाओं का निर्माण करने के अलावा राहत और पुनर्वास प्रदान करके उन्हें मुख्यधारा में लाने के प्रयास जारी रखे हैं। केंद्र और राज्यों ने आदिवासियों के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य और कल्याण, रोज़गार, राजनीतिक प्रतिनिधित्व और वास स्थलों से विस्थापन की स्थिति में राहत और पुनर्वास प्रदान करके उनके लिए अवसरों का सृजन किया है।

आदिवासी भारतीय प्रायद्वीप के मूल निवासी हैं। 1951 की जनगणना के अनुसार आदिवासियों की जनसंख्या भारत की कुल जनसंख्या का 5.6 प्रतिशत था और 2011 की जनगणना के अनुसार यह बढ़कर 8.66 प्रतिशत हो गई। भारत में आदिवासी समुदाय दो भिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में बसे हैं यानी मध्य भारत और उत्तर–पूर्वी क्षेत्र। अनुसूचित जनजाति की आधी से अधिक आबादी मध्य भारत, यानी मध्य प्रदेश (14.69 प्रतिशत), महाराष्ट्र (10.08 प्रतिशत), उड़ीसा (9.2 प्रतिशत), राजस्थान (8.86 प्रतिशत), गुजरात (8.55 प्रतिशत), झारखंड (8.29 प्रतिशत) और छत्तीसगढ़ (7.5 प्रतिशत) में बसी है। उनमें से लगभग 89.97 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में और 10.03 प्रतिशत शहरी क्षेत्रों में रहते हैं। आदिवासी समुदायों का एक बड़ा भाग अभी भी अपनी आजीविका के लिए छोटे पैमाने की खेती, जंगल और वन आधारित पशुधन पर निर्भर है, कुछ विशेष रूप से वंचित जनजातीय समूह, जिन्हें पहले आदिम जनजातीय समूह के रूप में जाना जाता था, वे जंगल और वन तथा पर्वतीय क्षेत्रों की परिधि में शिकारी, भोजन संग्रहकर्ता, चरवाहे और छोटे किसानों के रूप में रहते हैं।

पहाड़ी क्षेत्रों में रहने वाले जनजातीय समुदाय झूम खेती के आदी हो चुके हैं; एक ऐसी पद्धति जो समग्र रूप से मिट्टी, क्षेत्र और वन पारिस्थितिकी के लिए एक बड़ा खतरा बन गई है। आदिवासियों के वास स्थल भौगोलिक रूप से अलग– थलग हैं और शहरी और औद्योगिक हलचल से दूर हैं लेकिन खनिज, कोयला, जल संसाधन, वन, दर्शनीय स्थलों आदि जैसे प्राकृतिक संसाधनों की प्रचुरता ने उद्योग और व्यापारिक समूहों को वहां निवेश करने और उनसे लाभ भुनाने के लिए आकर्षित किया। इससे निवेशकों को लाभ हुआ लेकिन आदिवासियों की आजीविका चली गई। वन संरक्षण अधिनियम–1980 के अध्यादेश, विकास परियोजनाओं के लिए पहल और बाद की सरकारों की आर्थिक विकास नीतियों में बदलाव का आदिवासियों के लिए आजीविका के अवसरों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। औद्योगिक विकास में दूसरों के साथ प्रतिस्पर्धा करने और ग्रामीण तथा शहरी समुदायों को सहूलियत प्रदान करने के सरकार के प्रयासों ने खनन, बिजली उत्पादन, सिंचाई, वनों की सुरक्षा, वन्य जीवन के संरक्षण आदि के लिए आदिवासियों के प्राकृतिक वास वाले वन और पहाड़ी क्षेत्रों को चिह्नित किया।

मध्य प्रदेश के खंडवा ज़िले के आदिवासी ग्रामीण क्षेत्र की महिलाएं बाँस का सामान बनाते हुए।

स्वतंत्रता–पूर्व स्थिति

मानव जाति के विकास के बाद से मनुष्य शिकारी और भोजन संग्रहकर्ता थे। अनेक समुदाय बस गए और सभ्य तथा सम्मानजनक जीवन जीने लगे पर आदिवासियों ने अपने जीवन और आजीविका को वन और वन–आधारित पशुधन तक सीमित कर दिया। मुगलों और अंग्रेज़ों द्वारा भारत पर आक्रमण से पहले आदिवासियों को समाज का समान भाग माना जाता था और वे पूरी तरह से राजशाहियों, भूमि और वन राजनीति में, अन्य समूहों के साथ सहायक संबंधों में, विशेष रूप से व्यावसायिक विशेषज्ञता और वाणिज्य व युद्ध में भी शामिल थे। हालांकि यूरोपीय उपनिवेश युग ने बाहरी लोगों के साथ उनके जीवन को बदल दिया जिन्होंने अपने संसाधनों के लिए उनका शोषण किया। ईमारती लकड़ी के लिए पेड़ों को काटा गया। वनभूमि का उपयोग चाय, रबर और कॉफी के बागानों के लिए किया जाता था। वन क्षेत्रों में रेलवे लाइन और सड़कों का निर्माण किया गया। माल के परिवहन के लिए जंगल से समुद्री तटों तक के मार्ग बनाए गए।

निजी संपत्ति की अवधारणा 1793 में अंग्रेज़ों की स्थायी बसावट और 'जमींदारी' प्रणाली की स्थापना के साथ शुरू हुई जिसने अंग्रेज़ों द्वारा राजस्व की उगाही के उद्देश्य से सामंती जमींदारों को आदिवासी क्षेत्रों सहित विशाल क्षेत्रों का नियंत्रण प्रदान किया। इमारती लकड़ी की अर्थव्यवस्था और अन्य राजस्व संसाधनों के लिए आदिवासी समुदायों को जंगल से ज़बरन बेदखल करना शुरू किया गया था। भारतीय वन अधिनियम 1927 में लागू हुआ जिसमें यह प्रावधान था कि कोई भी वन क्षेत्र या बंजर भूमि, जो निजी स्वामित्व में नहीं थी, उसे आरक्षित क्षेत्रों के रूप में चिह्नित किया जा सकता था। भारत में वनों और बड़े क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासी समुदायों के लिए कोई विशेष प्रणाली या निपटान अधिकार नहीं बनाए गए थे और इसके लिए सर्वेक्षण नहीं किया गया था। कृषि में संलग्न आदिवासी लोग बिना आधिकारिक भूमि स्वामित्व के खेती करते रहे। इस प्रणाली के तहत आदिवासियों और गैर–आदिवासियों द्वारा समान रूप से वृक्षों की कटाई, शिकार, चारागाह खोजने या कृषि की प्रथा ने अतिक्रमण को बढ़ावा दिया। ब्रिटिश कानून और आक्रामक नीतियों ने भारत में आदिवासी रिहायशी क्षेत्रों को प्रभावित किया विशेष रूप से उनकी आजीविका को, जो स्वतंत्र भारत की सरकार के लिए एक चुनौती बन गई।

स्वतंत्रता उपरांत स्थिति

भारत के संविधान ने अनुसूचित जनजातियों के कल्याण और समग्र विकास के लिए कई प्रावधान किए हैं। 1952 में तत्कालीन सरकार की पंचशील नीति ने आदिवासी कल्याण हेतु प्रशासन के मार्गदर्शन के लिए पाँच सिद्धांत तय किए हैं जो निम्नलिखित हैं:

- आदिवासियों को उनकी प्रतिभा के अनुसार विकास करने देना चाहिए।
- भूमि और जंगल में आदिवासियों के अधिकारों का सम्मान किया जाना चाहिए।
- बहुत से बाहरी लोगों को शामिल किए बिना जनजातीय टीमों को प्रशासन और विकास के कार्यों के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।
- आदिवासी क्षेत्रों की सामाजिक और सांस्कृतिक संस्थाओं के विरुद्ध जाए बिना जनजातीय विकास किया जाना चाहिए।
- आदिवासी विकास का मूल्यांकन का आधार उनके जीवन की गुणवत्ता होना चाहिए न कि खर्च किया गया धन।

आजीविका और अन्य प्रासंगिक मुद्दे

संविधान के पंचशील अनुच्छेद 275 को साकार करने में अनुसूचित क्षेत्रों में रहने वाली आदिवासी आबादी के सामाजिक और आर्थिक कल्याण के कार्यक्रमों के लिए एक विशेष वित्तीय अनुदान प्रदान किया जाना अनिवार्य है। इस अनुच्छेद के तहत केंद्र सरकार ने पहली पंचवर्षीय योजना की अवधि के लिए 12 करोड़ रुपये का प्रावधान किया। यह स्थिर कृषि जीवन या सीढ़ीदार खेती और समुदायों को लाभ पहुँचाने के लिए कृषि के उन्नत तरीकों को अपनाने के लिए था।

दूसरी पंचवर्षीय योजना आदिवासी क्षेत्रों में विकास कार्यक्रमों पर केंद्रित थी जिन्हें चार शीर्षों के तहत वर्गीकृत किया गया था– (क) संचार (ख) शिक्षा और संस्कृति, (ग) आदिवासी अर्थव्यवस्था का विकास तथा (घ) स्वास्थ्य, आवास और जल आपूर्ति। आदिवासी विकास के लिए लगभग 47 करोड़ रुपये आवंटित किए गए। राज्यों को लगभग 36,600 एकड़ भूमि के विकास, 6,570 एकड़ वन भूमि के पुनरुज्जीवन, कृषि उपकरणों और अच्छी नस्ल के सांडों का वितरण, लगभग 4,000 व्यक्तियों को विभिन्न शिल्पों में प्रशिक्षण और 825 कुटीर उद्योग केंद्रों की स्थापना के लिए भी सहायता दी गई।

तीसरी पंचवर्षीय योजना में झूम खेती में लगे व्यक्तियों के आर्थिक पुनर्वास, सहकारी समितियों के माध्यम से वनों का काम करने और आदिवासी कृषकों और कारीगरों की ऋण आवश्यकताओं को पूरा करने और उनके उत्पादों के विपणन के लिए बहुउद्देश्यीय सहकारी समितियों के गठन की परिकल्पना की गई। कई कार्यक्रम चलाए गए जिनमें भूमि सुधार, मृदा संरक्षण, लघु सिंचाई, उन्नत बीजों की आपूर्ति, खाद, उपकरण और बैल, प्रशिक्षण के लिए सुविधाओं का प्रावधान, उन्नत कार्य प्रणालियों का प्रदर्शन, मवेशियों, मत्स्य पालन, मुर्गीपालन, सुअर पालन और भेड़–पालन का विकास, प्रशिक्षण प्रदान करने वाले उत्पादन केन्द्रों का गठन, कुटीर उद्योगों में लगे ग्राम कारीगरों को सहायता और परामर्श का प्रावधान शामिल है।

चौथी पंचवर्षीय योजना में अनुसूचित जनजातियों की आर्थिक बेहतरी के लिए सबसे महत्वपूर्ण कार्यक्रम जनजातीय विकास खंडों का था जो दूसरी पंचवर्षीय योजना में जनजातीय आबादी की बड़ी संख्या वाले क्षेत्रों के गहन विकास से शुरू किया गया था। इसलिए कृषि उत्पादन और पशुधन उत्पादन बढ़ाने के कार्यक्रमों

को प्राथमिकता मिली। भूमिहीन मजदूरों की जीविका व्यवस्था में विविधता लाने और उनके आधुनिकीकरण के कार्यक्रमों को भी प्राथमिकता दी गई। आर्थिक उत्थान की योजनाओं जैसे भूमि आवंटन, कृषि एवं पशुपालन के विकास हेतु हल, बैल एवं उन्नत बीज खरीदने के लिए अनुदान, मृदा संरक्षण, भूमि उपनिवेशीकरण, लघु सिंचाई एवं सहकारी समितियों के संगठन एवं विकास की योजनाएं जारी रखी गई हैं।

पाँचवीं/पंचवर्षीय योजना के दौरान 16 राज्यों और 2 केंद्रशासित प्रदेशों के लिए जनजातीय उप–योजना को शामिल किया गया था। इन कार्यक्रमों को राज्य योजनाओं और केंद्रीय सहायता के प्रावधानों के माध्यम से वित्तपोषित किया गया था। 145 एकीकृत जनजातीय विकास परियोजनाओं में से लगभग 40 को तैयार किया गया और इसके लिए योजना के पहले तीन वर्षों के दौरान 65 करोड़ रुपये खर्च किए गए।

छठी पंचवर्षीय योजना (1980–85) की प्रमुख गतिविधियों में गरीबी के खिलाफ चौतरफा युद्ध और संसाधन–चिन्हित क्षेत्रों में विकास के प्रयासों की परिकल्पना शामिल थी जिसके लिए संसाधनों को i) राज्य योजनाओं से परिव्यय; (ii) केंद्रीय मंत्रालयों से निवेश (iii) विशेष केंद्रीय सहायता और (iv) संस्थागत वित्त के माध्यम से जुटाया गया था। ऋण और विपणन सुविधाएं प्रदान करने के लिए बड़े आकार की बहुउद्देशीय सोसायटियों (एलएएमपीएस) की स्थापना की गई थी। सेवाओं की व्यवस्था के प्रावधान द्वारा 62 ज़िलों के 233 प्रखंडों में झूम खेती करने वाले आदिवासी काश्तकारों के पुनर्वास के लिए कदम उठाए गए।

सातवीं पंचवर्षीय योजना में लोक और आदिवासी कलाओं के विकास पर ध्यान दिया गया विशेष रूप से वे जो विलुप्तप्राय हो गई थी जैसे कि हिमालयी क्षेत्रों की लोककला जिन पर पारिस्थितिकी और सांस्कृतिक रूप से संकट मंडरा रहा था। इन क्षेत्रों में कार्यरत स्वैच्छिक संगठनों की मदद के माध्यम से इन्हें सम्बल मिला। पूरक पोषण कार्यक्रम (एसएनपी) और मध्याह्न भोजन कार्यक्रम (एमडीएम) जैसी प्रत्यक्ष पोषण हस्तक्षेप योजनाओं के तहत बच्चों, गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली माताओं पर विशेष ध्यान दिया गया। इस अवधि के दौरान अपनाई गई जनजातीय उप–योजना (टीएसपी) रणनीति में निम्नलिखित शामिल हैं:

- राज्य में विकासखंडों को चिन्हित करना जहां जनजातीय आबादी बहुसंख्यक है और विकास के लिए एकीकृत और परियोजना–आधारित दृष्टिकोण अपनाने की दृष्टि से उनका एकीकृत जनजातीय विकास परियोजनाओं (आईटीडीपी) में गठन;
- टीएसपी के लिए धनराशि का निर्धारण और केंद्रीय और राज्य योजना क्षेत्रीय परिव्यय और वित्तीय संस्थानों से धन का प्रवाह सुनिश्चित करना; तथा
- जनजातीय क्षेत्रों में उपयुक्त प्रशासनिक ढांचे का निर्माण और उचित कार्मिक नीतियों को अपनाना।

जनजातीय क्षेत्र में बड़े आकार की बहुउद्देशीय सोसायटियों (एलएएमपीएस) को निदेशक मंडल और अन्य कार्यकारी निकायों में उनके जन आधार के विस्तार के माध्यम से मज़बूत किया गया ताकि उन्हें जनजातीय उत्पादों की बिक्री और विपणन, उपभोक्ता आवश्यकताओं और ऋण व्यवस्था में शोषण के उन्मूलन के लिए प्रभावी माध्यम बनाया जा सके। राज्य–स्तरीय जनजातीय विकास निगमों की गतिविधियों के समन्वय के लिए राष्ट्रीय स्तर के जनजातीय विपणन संगठन की स्थापना की गई थी जिसे पूर्ण रूप से प्रभावी बनाने की आवश्यकता है। लाभार्थी–प्रतिभागियों के साथ निकट परामर्श से योजना को अंजाम दिया जाएगा और परियोजना रिपोर्ट तैयार की जाएगी। आईटीडीपी, आदिवासी–बहुल इलाकों और आदिम आदिवासी समूहों के लिए वैज्ञानिक परियोजना रिपोर्ट प्राकृतिक संसाधन उपलब्धता, लोगों के पारम्परिक व्यवसायों और कौशल तथा एक उचित रूप से तैयार विकास परिप्रेक्ष्य के संदर्भ में बनायी जाएगी।

आठवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान भारतीय जनजातीय सहकारी विपणन विकास परिसंघ ने राज्य जनजातीय विकास सहकारी निगमों के माध्यम से लघु वनोपज के संग्रह और विपणन का प्रबंधन इस तरह से करना शुरू कर दिया था ताकि आदिवासियों को उचित रिटर्न सुनिश्चित हो सके। उपभोग और उत्पादन उद्देश्यों के लिए ऋण तक सीमित पहुंच ने साहूकारों/व्यापारियों पर अनुसूचित जनजातियों की निर्भरता को बढ़ा दिया जिसके कारण (अ) साहूकारों और व्यापारियों को ऋण देनदारियों की अदायगी के लिए विकासात्मक लाभों में हेराफेरी हुई और (ब) भूमि या अन्य संपत्ति के रूप में संसाधन आधार की क्षति हुई। अतः आठवीं पंचवर्षीय योजना का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य था बैंकों और सहकारी संस्थाओं से अधिकाधिक ऋण उपलब्ध कराना।

नौवीं पंचवर्षीय योजना अवधि के दौरान देश में विशेष रूप से जनजातीय विकास कार्य के लिए जनजातीय कार्य मंत्रालय की स्थापना की गई थी। जनजातीय कार्य मंत्रालय आदिवासियों के लिए स्थायी आजीविका के अवसर पैदा करने के लिए कई योजनाएं लागू कर रहा है। इसी प्रकार राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में पृथक जनजातीय कल्याण विभाग स्थापित किए गए।

अगली तीन योजनाएं (10वीं, 11वीं और 12वीं) भारत में आदिवासियों के कल्याण के लिए गठित जनजातीय मामलों के मंत्रालय के माध्यम से लागू की गई। भारत में आदिवासियों के लिए आजीविका के अवसरों को बढ़ावा देने के लिए लागू किए गए कुछ प्रमुख कार्यक्रमों का उल्लेख नीचे किया गया है:

1) **जनजातीय उत्पादों/उपज के विकास और विपणन के लिए संस्थागत सहायता:** इस योजना के तहत राज्य जनजातीय विकास सहकारी निगमों (एसटीडीसीसी) और भारतीय जनजातीय सहकारी विपणन विकास महासंघ

(ट्राईफेड) के लिए सहायता अनुदान जारी किया जाता है। इसका प्रयोजन विभिन्न जनजातियों के लोगों को उत्पादन, उत्पाद विकास, पारम्परिक विरासत के संरक्षण को व्यापक सहायता देना, आदिवासियों के वन और कृषि उत्पाद दोनों के लिए सहायता प्रदान करना, उपरोक्त गतिविधियों को चलाने के लिए संस्थानों की सहायता करना, बेहतर बुनियादी ढांचा प्रदान करना, डिज़ाइनों का विकास करना, कीमतों और उत्पादों को खरीदने वाली एजेंसियों के बारे में जानकारी का प्रसार करना, स्थायी विपणन के लिए सरकारी एजेंसियों की सहायता करना और इस प्रकार एक उचित मूल्य व्यवस्था सुनिश्चित करना है।

2) **न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) के माध्यम से लघु वनोपज (एमएफपी) का विपणन और एमएफपी के लिए मूल्य शृंखला का विकासः** यह योजना अनुसूचित जनजातियों और अन्य परम्परागत वन निवासियों को सुरक्षा तंत्र और सहायता प्रदान करती है जिनकी आजीविका वनोपज के संग्रह और बिक्री पर निर्भर करती है। यह योजनाएं स्थानीय स्तर पर आवश्यक बुनियादी ढांचे के साथ–साथ उनके द्वारा एकत्रित एमएफपी के लिए मुख्य रूप से न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) के माध्यम से लघु वनोपज (एमएफपी) संग्रहकर्ताओं के लिए उचित रिटर्न सुनिश्चित करती हैं।

3) **वन धन विकास कार्यक्रम (वीडीवीके):** इस योजना का उद्देश्य न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) और लघु वन उत्पादों के लिए मूल्य शृंखला का विकास करना है जिसका प्रयोजन वन सम्पदा का उपयोग करके आदिवासियों के लिए आजीविका सृजन सुनिश्चित करना है। इसका मुख्य उद्देश्य आदिवासियों के पारम्परिक ज्ञान और कौशल सेट का दोहन करना है, प्रौद्योगिकी और सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) को जोड़कर प्रत्येक चरण में उन्नत करना है और जनजातीय ज्ञान को एक लाभदायक आर्थिक गतिविधि में परिवर्तित करना है। यह पहल आदिवासी संग्रहकर्ताओं के लिए आजीविका सृजन और उन्हें उद्यमियों में बदलने का लक्ष्य रखती है। जनजातीय ज़िलों में जो अधिकांशतः वनाच्छादित हैं, आदिवासी समुदाय के स्वामित्व वाले वन धन विकास केंद्र (वीडीवीके) स्थापित किए जाएंगे है।

4) **राष्ट्रीय/राज्य अनुसूचित जनजाति वित्त और विकास निगम (एनएसटीएफडीसी/एसटीएफडीसी) को इक्विटी सहायताः** राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति वित्त और विकास निगम (एनएसटीएफडीसी) कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 25 के तहत लाइसेंस प्राप्त एक सरकारी गैर–लाभकारी कम्पनी है जो अनुसूचित जनजातियों को उनके आर्थिक और शैक्षिक विकास के लिए रियायती वित्तीय सहायता प्रदान करती है। यह स्वयंसहायता समूहों (एसएचजी) की सहायता करता है और 25 लाख रुपये प्रति एसएचजी तक की इकाई लागत वाली परियोजनाओं के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करता है। यह परियोजना की लागत का 90 प्रतिशत तक प्रदान करता है बशर्ते प्रति सदस्य ऋण 50,000 रुपये से अधिक न हो। यह परियोजना से संबंधित परिसंपत्तियों की खरीद और कार्यशील पूंजी के लिए ट्राइफेड के पैनल में शामिल जनजातीय कारीगरों को रियायती वित्त प्रदान करता है।

एनएसटीएफडीसी 25 लाख रुपये प्रति यूनिट तक की व्यावहारिक परियोजनाओं के लिए सावधि ऋण भी प्रदान करता है। इस योजना के तहत परियोजना की लागत का 90 प्रतिशत तक वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है और शेष राशि को सब्सिडी/प्रवर्तकों के योगदान/मार्जिन राशि के माध्यम से पूरा किया जाता है। ब्याज दर 5 लाख रुपये तक 6 प्रतिशत प्रति वर्ष, 10 लाख रुपये तक 8 प्रतिशत प्रति वर्ष और 10 लाख रुपये से अधिक पर 10 प्रतिशत प्रति वर्ष है। आदिवासी महिला सशक्तीकरण योजना (एएमएसवाई) अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के आर्थिक विकास के लिए एक विशेष योजना है जिसके तहत एनएसटीएफडीसी एक लाख रुपये तक की लागत वाली परियोजना के लिए 4 प्रतिशत प्रति वर्ष की ब्याज दर पर 90 प्रतिशत तक ऋण प्रदान करता है। एनएसटीएफडीसी ने अपनी स्थापना के बाद से लगभग 1,900 करोड़ रुपये संवितरित किए हैं। हाल के दिनों में एनएसटीएफडीसी ने अनुसूचित जनजातियों के शैक्षिक कौशल विकास के लिए आदिवासी शिक्षा ऋण योजना (एएसआरवाई), जागरूकता सृजन आदि जैसी नई योजनाएं शुरू की हैं।

ये योजनाएं इस तथ्य को उजागर करती हैं कि सरकार देश में आदिवासी समुदायों की आजीविका के विकास के माध्यम से समावेशी सशक्तीकरण के लिए प्रतिबद्ध है।

संदर्भ

1) प्रथम पंचवर्षीय योजना से 12वीं पंचवर्षीय योजना तक पंचवर्षीय योजना दस्तावेज़, योजना आयोग, भारत सरकार।
2) जनजातीय मामलों के मंत्रालय की 2017–18 से 2021–22 की वार्षिक रिपोर्ट।
3) जनगणना 2011 और जनगणना 2001, जनसांख्यिकीय आँकड़े।
4) राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति वित्त एवं विकास निगम (एनएसटीएफडीसी) की 2017–18 से 2020–21 की वार्षिक रिपोर्ट।

(डॉ मुनीराजू एस बी सामाजिक न्याय एवं सशक्तीकरण वर्टीकल, नीति आयोग, भारत सरकार में डिप्टी एडवाइज़र और रामराव मुंडे वरिष्ठ अनुसंधान अधिकारी हैं। लेख में व्यक्त विचार निजी हैं।)

ई–मेलः rn.mundhe@gov.in, mraju.sb@gov.in